भारत पड़ा अकेला

यह बात नकारी नहीं जा सकती कि मोदी सरकार पाकिस्तान की व्यूह रचना को भेदने में असफल रही है। कुछ दिन पहले अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप ने कश्मीर का मसला सुलझाने के लिए अपनी 'भलमनसाहत' वाली मध्यस्थता का जिक्र किया था

■ {É1{É¶É {ÉiÉ
´ÉnÊ¶ÉEò ¨ÉÉ¨É±ÉÉ Eò VÉÉxÉEòÉ®

पिछले कुछ महीनों से भारत-पाक संबंधों के संदर्भ में एक बेहद चिंताजनक प्रवृत्ति देखने को मिल रही है। तनाव का उतार-चढ़ाव तो मौसम के साथ घटता-बढ़ता रहता है, सीमा पर गोलाबारी या घुसपैठ की वारदात भी नई नहीं। इस बार भारतीय राजनय की लगातार विफलता दर्शा रही है कि हमारे विदेश मंत्रालय के दावों को झुठलाते हुए 'कश्मीर विवाद' में हस्तक्षेपकारी मध्यस्थता की पेशकश पाकिस्तान के पारंपरिक मित्रों ने तेज कर दी है। भारत का मानना है कि पाकिस्तान के साथ सभी विवादों को शांतिपूर्ण तरीके से निबटाने के लिए वह सदा तैयार है परंतु कश्मीर विवाद उभयपक्षीय है और इसमें किसी तीसरे की मौजूदगी की जगह नहीं। पाकिस्तान इस बात को स्वीकार नहीं करता और लगातार इस मुद्दे के अंतरराष्ट्रीयकरण की साजिश रचता रहा है-कभी आत्म निर्णय के बुनियादी अधिकार की दुहाई देता है तो कभी भारत द्वारा घाटी में मानवाधिकारों के उल्लंघन का लांछन लगाता है। विडंबना है कि भारत की सभी सरकारें पाकिस्तान से प्रायोजित अलगाववादी दहशतगर्दी का मुकाबला करने में असमर्थ रहने के कारण इकतरफा भरोसा बढ़ाने वाली पहलों को प्राथमिकता देती रही हैं। भारत की लाचारी और अपने सामरिक मित्रों की वफादारी के कारण पाकिस्तान का दुस्साहस बढ़ता रहा है। जब से भारत ने यह रुख अपनाया कि 'संवाद का कोई विकल्प नहीं' पाकिस्तान का आचरण और भी हिंसक रूप से निरंकुश हो गया है।

मोदी सरकार रही असफल

यह बात नकारी नहीं जा सकती कि मोदी सरकार भी पाकिस्तान की व्यूह रचना को भेदने में असफल रही है। कुछ दिन पहले अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप ने कश्मीर का मसला सुलझाने के लिए अपनी 'भलमनसाहत' वाली मध्यस्थता का जिक्र किया था, जबकि जगजाहिर है कि पाकिस्तान के पक्षधर अमेरिका को किसी भी तरह तटस्थ नहीं समझा जा सकता। उसके बाद भारत का दौरा करने वाले तुर्की के सदर ने यही सलाह दी कि भारत को कश्मीर का झगड़ा निबटाने के लिए बहुपक्षीय राजनय पर विचार करना चाहिए। दूसरे शब्दों में इस वक्त भारत की कमजोरी भांप बंदरबांट के लिए लार चुआते कई देश प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से हमारे लिए खतरनाक राजनयिक विकल्प सुझा रहे हैं। पीठ थपथपाने में माहिर हमारा विदेश मंत्रालय काफी समय से घोषणा कर रहा है कि उसके राजनयिक प्रयासों से पाकिस्तान अंतरराष्ट्रीय समुदाय में अकेला पड़ गया है-अलग थलग बहिष्कृत सा। जमीनी हकीकत कुछ और ही बयान कर रही है। पाकिस्तान को आतंकवादी राज्य घोषित करना तो बहुत दूर की बात है-उसने जिन खूंखार आतंकवादियों तथा कुख्यात भारत से भगोड़े अपराधियों को पनाह दी है उनके प्रत्यार्पण के मामले में रत्ती भर प्रगति नहीं हो सकी है। चीन का भी पूरा समर्थन पाकिस्तान की मौजूदा सरकार को प्राप्त है। नये रेशम राजमार्ग का निर्माण हो या ग्वादर बंदरगाह का नवीकरण, उसका सबसे भरोसेमंद साथी भारत का सबसे विकट बैरी चीन ही है। इसके अलावा राष्ट्र संघ जैसे जमावड़ों में जहां जनतांत्रिक कार्यशैली के बहाने संख्या बल को तरजीह दी जाती है, आपसी विवादों के बावजूद लगभग सभी इस्लामी देशों का समर्थन पाकिस्तान को प्राप्त है। हमारे समाजवादी युग के अरब मित्र देश हों या सांस्कृतिक सामीप्य का दम भरने वाले शिया बहुल आबादी वाले क्षेत्र कोई भी निःसंकोच भाव से कश्मीर के मामले में पाकिस्तान के विरुद्ध भारत के साथ नहीं।

बांग्लादेश को समझा जा सकता है अपवाद

बांग्लादेश को अपवाद समझा जा सकता है पर वहां भी यह स्थिति शेख हसीना के शासन के साथ जुड़ी है। यहां एक और बात की तरफ ध्यान दिलाना जरूरी है। पाकिस्तान तथा चीन दोनों के दीर्घकालीन सामरिक हितों का सन्निपात है। भारत के साथ सहयोग और सहकार की अपेक्षा भारत को कमजोर बनाना ही चीन के राष्ट्रहित में है, और रहेगा। खाद्य सुरक्षा, ऊर्जा सुरक्षा और अंतरराष्ट्रीय बाजार में प्रतिद्वंद्विता के कारण भारत का सोचना कि चीन उसे दक्षिण एशिया में अपना वर्चस्व स्थापित करने देगा, नादानी है। अभी हाल भूटान ने उस परियोजना से अपने को अलग कर लिया जिसके तहत भारत, नेपाल, भूटान और म्यांमार एक राजमार्ग से जोड़े जाने थे। यह इसलिए कि कहीं चीन नाराज न हो जाए। नेपाल की स्थिति अस्थिर है। उसके सहकार के बारे में भी भारत निःशंक नहीं रह सकता। दलाई लामा की अरुणाचल यात्रा के बाद चीन ने दिल्ली में होने वाली तीन देशों की विदेश मंत्रियों की वार्ता को स्थगित कर दिया। हालांकि रूस इसके लिए राजी था। जब कनाडा के कोई भारतीय मूल के सांसद या मंत्री भारत पहुंचते हैं तो 1984 के जख्म कुरेदने लगते हैं, या भारत में सिकुड़ी सहिष्णुता की मुंहफट आलोचना से नहीं हिचकते।

राष्ट्र संघ जैसे जमावड़ों में जहां जनतांत्रिक कार्यशैली के बहाने संख्या बल को तरजीह दी जाती है, आपसी विवादों के बावजूद लगभग सभी इस्लामी देशों का समर्थन पाकिस्तान को प्राप्त है। अरब देश हों या शिया बहुल आबादी वाले क्षेत्र कोई भी निःसंकोच कश्मीर के मामले में पाकिस्तान के विरुद्ध भारत के साथ नहीं

यह सवाल उठाना जायज है कि क्यों ऐसा हो रहा है? दुर्भाग्य यह है कि 'स्वयंभू गोरक्षकों' के उत्पात तथा दलित आक्रोश को निरस्त करने में असमर्थ सरकार की छवि हर किसी को उसे प्रताड़ित करने के लिए प्रोत्साहित करने लगी है। मर्मस्थल में माओवादी हिंसा का अचानक विस्फोट भी इसी का उदाहरण है। अभी भी राज्य सभा में बहुमत के अभाव में एनडीए सरकार को मनोवांछित बहुमत जुटाने में कठिनाई हो रही है। सर्वोच्च न्यायालय के साथ मुठभेड़ की मुद्रा के कारण भी सरकार असमंजस में नजर आती है। कुल मिला के आंतरिक चुनौतियां भारत का ध्यान संवेदनशील सामरिक चुनौतियों और जटिल राजनय से भटकाती रही हैं। भारत के बाजार में पैर पसारने के इच्छुक इस जमीन पर भारत के साथ हमदर्दी जताते हैं, पर लौटते ही पलटी खा लेते हैं। यह बात नकारी नहीं जा सकती कि पाकिस्तान की तुलना में भारत राजनयिक मंच पर अकेला खड़ा दिखलाई दे रहा है। ■

केवल संवाद ही नहीं फिजिकल रेस्पांस भी

■ bÉ. ®½ÒºÉ ÊºÉ½
+iÉ®®É¹]ÅÒªÉ ¨ÉÉ¨É±ÉÉ Eò VÉÉxÉEòÉ®

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने 1950 में भारत-पाकिस्तान संबंधों पर टिप्पणी करते हुए कहा था : 'मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि, हालांकि हम एक दूसरे से जुदा हो गए हैं, हमारे अपने ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और भौगोलिक संबंध मौलिक रूप से इतने बड़े हैं कि हर उन्माद के बावजूद, हत्या और मारकाट के बावजूद, अंततः मूलभूत आकांक्षा बची रहेगी और अन्य सभी चीजों को परास्त कर देगी, यदि स्वभावतः भारत और पाकिस्तान इतने भयानक पिछड़े न रहे तो।' सम्भवतः आज भी भारतीय राजनय इसी आशावादी दृष्टिकोण और पाकिस्तान अपने परंपरागत मनोविज्ञान पर ठिठका हुआ है। तब क्या राममनोहर लोहिया के इस निष्कर्ष पर सहमति जताई जा सकती है कि भारत और पाकिस्तान कभी मित्र नहीं हो सकते?

एक सवाल यह भी है कि भारत अपनी विदेश नीति तय करते समय पाकिस्तान को किस खांचे में रखता है-मित्र या शत्रु ? एक प्रश्न और भी है कि आखिर, वह कौन-सी ताकत है जिसके बल पर पाकिस्तान भारत से लगातार छद्मयुद्ध लड़ने में कामयाब रहा है? क्या भारत पाकिस्तान के प्रति किसी स्थायी नीति अथवा विचार के आधार पर अपनी नीतियों निर्माण करता हुआ आगे बढ़ा है, अथवा तदर्थवाद के सहारे? पाकिस्तान 'स्टेट ऑफ माइंड' नहीं बदल सकता, फिर भारत के रेस्पांस का तरीका क्या होगा-केवल कूटनीति, केवल फिजिकल या फिर एक साथ सभी?

नरेन्द्र मोदी ने शपथ ग्रहण के दिन से 'नेबर्स फर्स्ट' को अपनी विदेश नीति में सबसे आगे रखा और कई ऐसे कदम उठाए जो संभ्रांत एवं प्रगतिशील राष्ट्र के लिए जरूरी हो सकते थे, विशेषकर 'हेड ऑन डिप्लोमेसी' अथवा 'पॉलिसी ऑफ मास्टर स्ट्रोक' (काबुल से लाहौर प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के रायविंड पैलेस पहुंचने की कूटनीति) से लेकर 'न्यू हाईवे डिप्लोमेसी' (पठानकोट हमले के पश्चात पाकिस्तानी जेआईटी को आमंत्रण देकर) तक। लेकिन इन कदमों के बाद भी क्या पाकिस्तान ने अपना नजरिया बदला?

बात नहीं बनेगी आदर्शवाद से

कारण यह है कि पाकिस्तान में रावलपिंडी के 'स्टैलियनों' और आईएसआई के 'लकड़बग्घों' (पाकिस्तान के दो शक्तिशाली प्रतिष्ठानों के लिए प्रयुक्त नाम) ने अपनी हरकतों को अंजाम देने में लगातार सफलता पाई, इसलिए उनके हौसले इतने बढ़ गए कि वे भारत को सॉफ्ट स्टेट के नजरिए से देखने लगे। यही नहीं, पाकिस्तान का एक बड़ा बुद्धिजीवी वर्ग इस मनोविज्ञान का शिकार है कि पाकिस्तान एक 'न्यूक्लियर स्टेट' है। अतः उसे इस निष्कर्ष को स्वीकारते हुए आगे बढ़ना चाहिए कि भारत पाकिस्तान का 'इटरनल एनमी' है। अब यदि भारत नैतिकता, संभ्रांतता, प्रगतिशीलता और उदारता के प्रतीकात्मक आदर्शवाद के साथ वैश्विक राजनीतिक धरातल पर स्वयं को पेश करना चाहेगा तो फिर प्रतीकों से अधिक कुछ भी नहीं प्राप्त कर पाएगा।

भारत की लगातार कोशिश रही है कि दुनिया के देश पाकिस्तान को आतंकवादी देश घोषित करें, लेकिन भारत यूटोपियाई नैतिकता के कारण स्वयं ऐसा नहीं कर पा रहा। भारत को चाहिए कि पाकिस्तान को अति शीघ्र आतंकवादी देश घोषित करे। ऐसा करते ही उसके प्रति भारतीय नीतियों को बदलने का मार्ग प्रशस्त हो जाएगा जिन्हें वह कम से कम तीन क्षेत्रों में प्रभावी बना सकता है। प्रथम यह कि आतंकवादी देश के साथ कूटनीतिक वार्ता तब तक सम्भव नहीं हो सकती जब तक कि वह अपने देश से आतंकवादी कैम्पों को खत्म नहीं कर देता या उन्हें फंडिंग एवं ट्रेनिंग (लॉजिस्टिक्स सहित) देना बंद नहीं कर देता। द्वितीय-आतंकवादी राष्ट्र किसी भी देश का व्यापारिक मामलों में 'मोस्ट फेवर्ड नेशन' नहीं हो सकता इसलिए उसे 'मोस्ट फेवर्ड नेशन' की सूची से तत्काल बाहर करने की कार्यवाही करनी चाहिए। तृतीय-एक आंतकवादी राष्ट्र को भारत वे सुविधाएं कैसे दे सकता है, जो जो मित्र-पड़ोसी राष्ट्र को दी जाती हैं यानि वह सिंधु जल संधि की पुनरीक्षा/पुनर्विचार की दिशा में आगे बढ़ सकता है।

इसके बाद यदि चाहे तो 'डिवाइड डिप्लोमेसी' के जरिए ब्लूचिस्तान में अलगाववादी आंदोलन को प्रोत्साहन एवं संरक्षण दे सकता है, अथवा सर्जिकल या डीप ऑपरेशंस के जरिए पाकिस्तान पर सीधी चोट कर सकता है। हालांकि भारत ने सर्जिकल स्ट्राइक की थी, लेकिन यह एक माइनर सर्जिकल स्ट्राइक थी, जिससे न तो पाकिस्तान की आर्मी को कोई नुकसान पहुंचा, न पाकिस्तान को और न ही आतंकवाद को। हां, नवाज शरीफ पर सेना का शिकंजा अवश्य कस गया और सेना के खिलाफ पाकिस्तान की कुछ जमातों की तरफ से शेम-शेम जैसी मंद ध्वनियां अवश्य सुनाई देने लगीं। यही स्थिति ब्लूचिस्तान को लेकर रही, जिसे लेकर प्रधानमंत्री ने लाल किले की प्राचीर से एक संदेश तो दिया लेकिन निर्णायक कदम नहीं उठाए गए। सर्जिकल या डीप ऑपरेशन जैसे उपाय अंतिम विकल्पों के रूप में होने चाहिए अथवा लगातार होने चाहिए ताकि प्रशिक्षित आतंकियों को गहरी क्षति पहुंचाई जा सके और पाक सेना को बड़ा धक्का, लेकिन इनमें पॉपुलिज्म का तत्व शामिल नहीं होना चाहिए जैसा कि पिछली सर्जिकल स्ट्राइक के साथ रहा।

यही वजह है कि सर्जिकल स्ट्राइक का तात्कालिक प्रभाव भले ही संतोषजनक रहा हो लेकिन दीर्घकालिक नहीं। जहां तक अंतरराष्ट्रीय कूटनीति का प्रश्न है, तो बदलती अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों और रूस व अमेरिका के नवउद्देश्यों के बाद भारत के लिए भी 'डिप्लोमेटिक रिसेपिंग' की जरूरत है। आज निष्पक्ष विवेचनों में आप भारत को दक्षिण एशिया, मध्य-पूर्व, मध्य-एशिया, पूर्वी अथवा दक्षिण-पूर्व एशिया में डिप्लोमेटिक डिविडेंड हैसियत में नहीं पा सकते। ध्यान देने योग्य बात यह है कि बराक ओबामा की 'एशिया पीवोट' नीति में भारत महत्वपूर्ण स्थिति में था, लेकिन ट्रंप की 'अनिश्चितता आधारित विदेश नीति' ने फिलहाल तो एशिया-प्रशांत में वैक्यूम पैदा कर दिया है। इसे भरेगा कौन, भारत की स्थिति इसी पर निर्भर होगी। मध्य-पूर्व में जो स्थितियां हैं, उनमें भारत किसी निर्णायक भूमिका में नहीं है। इसलिए यहां भी डिविडेंड हासिल होने की संभावनाएं नहीं हैं।

हमें पुनर्विचार करना चाहिए कि हम पाकिस्तान को वैश्विक मंच पर अलग-थलग करने में कितने सफल हुए हैं। हम जिसे आतंकी घोषित कराने की कोशिश में हैं, उसी को मध्य-पूर्व के देश आतंकवाद के खिलाफ कमान सौंप रहे हैं

बढ़ सकती हैं भारत की चुनौतियां

हां, मध्य-एशिया में स्थितियां यदि संतुलन में नहीं तो विपरीत संतुलन में नहीं मानी जा सकतीं। शीतयुद्ध और उसके बाद भी भारत का 'ऑल व्हेदर फ्रेंड' रहा रूस अब चीन तथा पाकिस्तान के साथ एक 'स्ट्रैटेजिक ट्रैंगल' बना रहा है। इस्लामाबाद-बीजिंग धुरी पहले से भारत के लिए वृहत्तर सामरिक चुनौतियां उत्पन्न कर रही थी, अब इसमें मास्को के जुड़ जाने से भारत के लिए चुनौतियां और भी बढ़ जाएंगी। ऐसे में भारत को कुछ देशों के साथ रणनीतिक संबंध स्थापित करने होंगे जो बीजिंग की 'चेक डिप्लोमेसी' और इस्लामाबाद की 'इस्लामिक डिप्लोमेसी' (फेथ डिप्लोमैसी) को काउंटर करने में सहायक हों, अन्यथा पाकिस्तान को रोकना मुश्किल हो जाएगा।

हमें पुनर्विचार करना चाहिए कि हम पाकिस्तान को वैश्विक मंच पर अलग-थलग करने में कितने सफल हुए हैं। बीजिंग, मास्को, वाशिंगटन, इस्तांबुल, मस्कट, तेहरान...आदि इस्लामाबाद विरोधी नहीं हैं, अथवा उसके साथ एलायंस बना रहे हैं, तो फिर हम सफल कहां। सऊदी अरब प्रायोजित 39 देशों वाली 'इस्लामिक मिलिटरी एलायंस टू फाइट टेररिज्म' की कमान पाकिस्तानी जनरल (रि) राहिल शरीफ संभालने जा रहे हैं। जिस पाकिस्तान को आतंकवादी राष्ट्र घोषित कराने की कोशिश कर रहे हैं, उसी को मध्य-पूर्व के 39 देश आतंकवाद के खिलाफ लड़ने के लिए अपनी संयुक्त सेना की कमान सौंप रहे हैं यानि पाकिस्तान अलग-थलग नहीं हुआ। फिर तरीका क्या हो? मेरी दृष्टि में एक यह संदेश कि भारत सॉफ्ट स्टेट नहीं है। द्वितीय-फिजिकल और डिप्लोमेटिक रेस्पांस एक साथ, लेकिन यह मानते हुए कि पाकिस्तान एक कमजोर राष्ट्र नहीं है। सो, पारंपरिक मनोविज्ञान को परिवर्तित करने और 'रीयल पॉलिटिक' की विदेश नीति अपनाने की जरूरत है। ■

तलाशें पृथक समझौते की संभावनाएं

■ |É¶ÉÉiÉ ÊºÉ½
SÉÒxÉÒ ¨ÉÉ¨É±ÉÉ Eò VÉÉxÉEòÉ®

चीन के अंग्रेजी दैनिक 'ग्लोबल टाइम्स' में छपे एक लेख में कश्मीर विवाद में चीन की मध्यस्थता की संभावना से सबंधित एक टिप्पणी ने भारतीय मीडिया का ध्यान आकर्षित किया है। 'ग्लोबल टाइम्स' चीन की सत्ताधारी 'चीन की कम्युनिस्ट पार्टी' (कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ चाइना-सीपीसी) के करीब माना जाता है। लेख में दैनिक के संवाददाता हू वेई चिआ ने लिखा है, चीन के बेल्ट एंड रोड कार्यक्रम के तहत चीन द्वारा भारी मात्रा में किए गए निवेश ने चीन को कश्मीर विवाद में एक हिस्सेदार बना दिया है। इसलिए इस समस्या के समाधान में उसके खुद के हित जुड़े हुए हैं। परंतु यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि लेखक ने यह लेख कश्मीर विवाद पर नहीं लिखा है। हू वेई चिआ ने दरअसल अंतरराष्ट्रीय राजनीति में चीन के बढ़े हुए कद और प्रभाव के मद्देनजर उसकी अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अनेक द्विपक्षीय विवादों में मध्यस्थ की बढ़ी हुई स्वीकार्यता पर ध्यान खींचा है।

उनका जोर रोहंगिया मुस्लिमों के सवाल पर म्यांमार और बांग्लादेश के बीच चीन द्वारा हाल में किए गए मध्यस्थता प्रयासों पर है। इस पर लिखते हुए उन्होंने बेल्ट एंड रोड के मद्देनजर चीन की बढ़ी क्षमताओं, प्रभाव और विवादों के सुलझने को चीन के खुद के हितों में बताने पर जोर डाला है। इस संदर्भ में चिआ ने उदाहरण बतौर भारत व पाकिस्तान के मध्य कश्मीर विवाद का हवाला दिया है। अतः इस टिप्पणी को चीन सरकार से जोड़ कर देखने की गुंजाइश अभी तक नहीं है। यह टिप्पणी पत्रकारीय एवं अकादमिक ही है।

इसके बावजूद टिप्पणी गौरतलब है क्योंकि यह बदलती जमीनी हकीकत और साथ ही भविष्य की संभाव्यता की ओर ध्यान खींचती है। सही है कि चीन औपचारिक तौर पर कश्मीर विवाद में तटस्थ है परंतु ऐतिहासिक तौर पर देखें तो चीन माओवादी युग में (1962 में भारत-चीन युद्ध के बाद) न केवल पाकिस्तान का हिमायती बन कर उभरा, बल्कि भारतीय कश्मीर में अलगाववाद को उसने राष्ट्रीयता का मामला और संघर्ष करार दिया। चीन और पाकिस्तान की सैनिक-सामरिक दोस्ती और चीन की पाकिस्तान को उसके परमाणु शस्त्र और मिसाइल कार्यक्रम में सहायता जगजाहिर है परंतु तंग श्याओ फिंग के नेतृत्व के दौर में बदले हुए माहौल में चीन ने सत्तर के दशक के आखिर और अस्सी के दशक की शुरुआत में भारत के अंदरूनी मामलात पर अपना रवैया बदला। उसके बाद धीरे-धीरे भारत-चीन संबंध भी सामान्य हुए।

भारत-पाक विवाद को द्विपक्षीय माना चीन ने

कश्मीर विवाद के संदर्भ में इसका सकारात्मक परिणाम यह हुआ कि चीन ने कश्मीर मामले पर संयुक्त राष्ट्र का हवाला देना बंद कर दिया। इस विवाद को भारत और पाकिस्तान का द्विपक्षीय मामला मान लिया, जिसे दोनों देशों को बातचीत और शांतिपूर्ण ढंग से सुलझाना चाहिए। औपचारिक तौर पर ही सही पर चीन ने इस मामले पर तटस्थ भाव अखित्यार कर लिया। पर उसके पाकिस्तान के साथ सैनिक-सामरिक ताल्लुकात बरकरार रहे।

यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि दशकों तक उनकी दोस्ती में आर्थिक पक्ष न के बराबर या बहुत कमजोर रहा। पिछले कुछ वर्षों में उनके आर्थिक संबंधों ने ठीकठाक तरक्की की है। पर इस लिहाज से चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा समझौता, 2015 (चाइना-पाकिस्तान इकनॉमिक कॉरिडोर, 2015) एक क्रांतिकारी बदलाव है। ताजा मीडिया खबरों के मुताबिक चीन आने वाले समय में 62 बिलियन डॉलर इस आर्थिक गलियारे में निवेश करेगा। यह गलियारा बेल्ट एंड रोड कार्यक्रम के छह गलियारों में से एक है। यह पाक अधिकृत कश्मीर से होकर गुजरता है। इस गलियारे के भारत के लिए विपरीत सामरिक परिणाम हैं।

भारत को चीन के साथ पाक अधिकृत कश्मीर पर पृथक समझौता करने की संभावनाएं तलाशनी चाहिए। भारत और चीन के बीच ऐसा एक समझौता न केवल पाक अधिकृत कश्मीर पर भारत के दावे को बल देगा और इस क्षेत्र पर भारत के दावे को अंतरराष्ट्रीय समुदाय की निगाहों में लाएगा

एक अहम परिणाम यह है कि चीन का पाक अधिकृत कश्मीर में भारी मात्रा में निवेश चीन को कश्मीर समस्या और कश्मीर में एक हिस्सेदार बना देता है। यह बात सही है कि चीन को पहले से ही एक हिस्सेदार माना जा सकता है। चीन का भारत के साथ लद्दाख क्षेत्र में सीमा विवाद है। 1963 के चीन पाकिस्तान सीमा समझौते के तहत पाकिस्तान 5000 वर्ग किलोमीटर जमीन अपने कब्जे वाले उत्तरी कश्मीर में शक्सगाम घाटी में चीन को दे चुका है। समझौते के अनुच्छेद छह के तहत सीमा निर्धारण के बारे में भारत-पाकिस्तान के मध्य विवाद सुलझने के बाद जरूरत पड़ी तो चीन संबंधित राष्ट्र से दुबारा समझौता करेगा।

यहां दो-तीन बातें गौरतलब हैं। पहली, भारत ने चीन के साथ लद्दाख में सीमा विवाद को सीमा विवाद तक ही सीमित रखा है। चीन की कोई हिस्सेदारी भारत-पाक के मध्य व्यापक कश्मीर विवाद में नहीं स्वीकारी है। इसीलिए दूसरे, चूंकि भारत इस विवाद में अंतरराष्ट्रीय मध्यस्थता स्वीकार नहीं करता है, चीन भी इसका अपवाद नहीं है। तीसरे, समझौते का पूर्व वर्णित अनुच्छेद मानता है कि चीन भारत-पाक कश्मीर विवाद में तटस्थ है। परंतु, सवाल है, जिसका इशारा 'ग्लोबल टाइम्स' में चिआ के लेख में मिलता है, कि एक बार जब चीन अरबों डॉलर इस विवादित क्षेत्र में लगा देगा तो क्या वह अपनी तटस्थता का सम्मान करेगा? क्या वह समाधान प्रक्रिया का हिस्सा नहीं बनना चाहेगा। ऐसे में जरूरी है कि भारत सरकार इस मामले पर गंभीरता से सोचे। सरकार को चीन के साथ पाक अधिकृत कश्मीर पर एक पृथक समझौता करने की संभावनाएं तलाशनी चाहिए, जिसके तहत चीन इस इलाके को केवल भारत और पाक के बीच का विवाद माने। और माने कि उनके बीच विवाद सुलझने के बाद जहां जरूरत होगी वहां वह आर्थिक गलियारे के प्रोजेक्ट्स के बारे में भारत के साथ पुनः समझौता करेगा। भारत और चीन के बीच ऐसा एक समझौता न केवल पाक अधिकृत कश्मीर पर भारत के दावे को बल देगा और इस क्षेत्र पर भारत के दावे को अंतरराष्ट्रीय समुदाय की निगाहों में लाएगा, बल्कि भारत और चीन के बीच चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारे पर चल रही रस्साकशी को भी खत्म करेगा।

(लेखक रक्षा अध्ययन एवं विश्लेषण संस्थान (आईडीएसए) में एसोसिएट फेलो हैं। विचार उनके व्यक्तिगत हैं)